यूनिट-द्वितीय
गांधीजी की नई तालीम
Unit-II
GANDHIJI'S NAI TALIM

गांधीजी का जीवन-दर्शन
[Gandhiji's Philosophy of Life]

भारतभूमि को आदिकाल से ही अनेक महापुरुषों को जन्म देने का गौरव प्राप्त है। वर्तमानकाल के महापुरुषों में महात्मा गांधी का नाम सर्वप्रथम लिया जा सकता है। उनकी तुलना ईसा और बुद्ध से की जाती है। आईनस्टाइन ने कहा था कि *"आने वाली पीढ़ियाँ मुश्किल से ही स्वीकार करेंगी कि हाड़-माँस का उन जैसा व्यक्ति कभी इस धरती पर भी अवतरित हुआ था।"* डॉ० राधाकृष्णन् के अनुसार, *"भूलों में डूबी और समय के छल-कपट से घिरी दुनिया में गांधीजी ने ईश्वरीय सहायता के अमर सिद्धान्तों और मानव प्रेम को ही उचित मानव-सम्बन्धों की स्थापना के लिए एकमात्र आधार बताया। हम उनके जीवन और संदेश में सभ्यता के उस स्वप्न को साकार होता देखते हैं।"* जिस व्यक्ति ने समस्त विश्व को प्रकाश दिया, उसके विचारों का अध्ययन करना देश की वर्तमान पीढ़ी के लिए और भावी पीढ़ियों के लिए भी आवश्यक है।

युग पुरुष महात्मा गांधी ने जीवन के जिन तत्वों, आदर्शों और मूल्यों पर विचार किया, उन्हें अपने जीवन में अपनाते हुए वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में प्रयोग किया तथा सकारात्मक निष्कर्ष प्राप्त किया, जिसके फलस्वरूप उनके वैचारिक पथ पर चलने वालों की एक परम्परा बन गयी। इस पथ को दुनिया में गांधीवाद के नाम से जाना जाता है। यद्यपि उन्होंने अपने को किसी 'वाद' या 'परम्परा' से अलग रखा। उन्होंने स्वयं कहा कि, *"गांधीवाद नाम की कोई वस्तु नहीं है और न मैं अपने पीछे कोई सम्प्रदाय छोड़ जाना चाहता हूँ। मैं किसी मत को चलाने का दावा नहीं करता। मैंने तो केवल अपने ढंग से आधारभूत सच्चाइयों को अपने नित्यप्रति के जीवन एवं समस्याओं पर लागू करने का प्रयत्न किया है। मैंने जो मत बनाये और निष्कर्ष निकाले हैं, वे सब अन्तिम नहीं हैं। मैं कल ही उन्हें परिवर्तित कर सकता हूँ। दुनिया को सिखाने के लिये मेरे पास कुछ भी नहीं है। सत्य और अहिंसा उतने ही पुरातन हैं जितने कि पहाड़। मैंने तो इन दोनों को यथासम्भव विस्तृत क्षेत्र में प्रयोग करने का प्रयत्न किया है। आप इसे गांधीवाद न कहें, इसमें कोई वाद नहीं है और इसके प्रसार के लिये किसी विकसित साहित्य के प्रचार की आवश्यकता भी नहीं है।"* गांधीजी जैसे महान् व्यक्ति से स्वयं के विषय में इस प्रकार की अहंकारविहीन अभिव्यक्ति स्वाभाविक ही है। वास्तव में उनका जीवन उनकी व्यावहारिक अनुभूतियों का दर्शन है। उनका जीवन ही उनके सन्देश और उनके विचारों की खुली पुस्तक है। विचार, वाणी एवं व्यवहार में एकता ही उनका जीवन-दर्शन है। फिर भी उनका एक निश्चित जीवन-दर्शन है। सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जटिलताओं के समाधान के लिये उनके कुछ विशेष सिद्धान्त एवं उनकी पद्धति है। उनके इन सिद्धान्तों और कार्य पद्धति को सामूहिक रूप से 'गांधीवाद' के नाम से पुकारा जा सकता है। गांधीवादी दर्शन के विषय में रमाया कहते हैं, *"गांधीवाद नीतियों, सिद्धांतों, नियमों, आदेशों, निषेधों आदि का सिद्धान्त ही नहीं वरन् जीवन का एक रास्ता है। इसके द्वारा जीवन की समस्याओं के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण का प्रतिपादन या पुरातन हल प्रस्तुत किये गये हैं।"* गांधीजी के दार्शनिक विचारों के आधारभूत तत्व निम्न प्रकार हैं—

ईश्वर

गांधीजी के जीवन-दर्शन का मूलाधार ईश्वर की संकल्पना है। गांधीजी का ईश्वर एक अमूल, निराकार, सर्वोच्च आध्यात्मिक शक्ति के रूप में है जो समस्त सृष्टि और सम्पूर्ण मानव जीवन को नियंत्रित करती है। इस संकल्पना का आधार मनुष्य के मन की श्रद्धा है, वह बुद्धिगम्य नहीं है। बार-बार वे अपने ईश्वर के प्रति समर्पित करते हुये सब कुछ उसी का प्रसाद मानते हैं।

Scanned by CamScanner

गांधीजी का ईश्वर में पूर्ण विश्वास है। उनको ईश्वर के अस्तित्व के विषय में किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। उनका मानना है कि ईश्वर एक अवर्णनीय तथा गूढ़ शक्ति है जो सर्वत्र व्याप्त है। वे कहते हैं, "मुझे एक अभाव तो अवश्य होता है कि इस सतत् परिवर्तनशील और नाशवान विश्व के पीछे कोई ऐसी चेतना शक्ति है जो स्वयं अपरिवर्तनशील है, कण-कण को एक सूत्र में बांधे हैं, जो सृजन, संहार और नवसृजन करती रहती है। वह सर्वज्ञ शक्ति ही ईश्वर है और चूंकि अपने मात्र इन्द्रिय-ज्ञान के बल पर मैं जितनी भी वस्तुओं की प्रतीति कर पाता हूँ, वे सभी नाशवान हैं, अनित्य हैं, इसलिए एक ईश्वर ही अनश्वर और नित्य है। यह शक्ति मंगलकारी है या अमंगलकारी? मुझे तो वह पूर्णतया मंगलकारी ही लगती है। इसीलिए मैं देखता हूँ कि मृत्यु के वातावरण में जीवन, असत्य के घमासान में सत्य और अन्धकार की चपेट में प्रकाश अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं। इसी से मैं निष्कर्ष निकालता हूँ कि ईश्वर जीवन, सत्य और प्रकाश रूप है। वह प्रेम है। वह परम शिवत्व है। इस प्रकार गांधीजी की ईश्वर की संकल्पना एक शाश्वत सत्य, शाश्वत मंगलमय स्वरूप की है, जैसा कि भारतीय उपनिषद्‌ों और गीता में कहा गया है।"

गांधीजी के अनुसार मनुष्य के जीवन का अन्तिम लक्ष्य है ईश्वर को प्राप्त करना और ईश्वर को उसकी कृतियों के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य मात्र ईश्वर की कृति है और मनुष्य मात्र की सेवा करना ईश्वर को पहचानना और प्राप्त करना है। गांधीजी ने ईश्वर को सत्य की संज्ञा दी है। वे कहते हैं कि मैं ईश्वर की सत्य के रूप में उपासना करता हूँ, सत्य के अतिरिक्त कोई दूसरा ईश्वर नहीं है। इस प्रकार गांधीजी के अनुसार ईश्वर एवं सत्य पयार्य हैं। सत्य वह है जो शाश्वत है और जिसका विनाश नहीं होता। उन्होंने कंहा कि हम में से हर एक के लिये यह आवश्यक है कि हम ईश्वर की अनुभूति अपने हृदय में करें। वे कहते हैं कि जहाँ सत्य है वहाँ ज्ञान भी है, जो सच्चा है। जहाँ सत्य नहीं, वहाँ सच्चा ज्ञान भी नहीं, यही कारण है कि ईश्वर के नाम के साथ चित भी जुड़ा है और जहाँ सच्चा ज्ञान है, वहां सदा आनन्द भी है और वहाँ दुःख को कोई स्थान नहीं। जिस प्रकार सत्य शाश्वत है उसी प्रकार उससे निकलने वाला आनन्द भी शाश्वत है। इसलिये हम ईश्वर को सच्चिदानन्द कहते हैं अर्थात् जो अपने में सत्य, ज्ञान और आनन्द संजोये है।

सत्य

सत्य गांधीजी के जीवन-दर्शन का सर्वश्रेष्ठ तत्व है। इसमें शिवम् और सुन्दरम् दोनों निहित हैं। इनके लिये सत्य सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त है। वे सभी चीजों का आधार नैतिकता को मानते थे और सत्य को नैतिकता का सारांश मानते थे। उनके अनुसार सत्य धर्म का सार है। सत्य गांधीजी के लिये सबसे बढ़कर, सबसे महत्त्वपूर्ण और सर्वव्यापक सिद्धान्त तो था ही सभी मानवीय गुणों और विशिष्टताओं का तर्कसंगत आधार भी था। उन्होंने कहा कि सत्य हमारे जीवन का प्राण है। ब्रह्माण्ड सत्य को परिवर्तित करता है, इसलिये समाज को भी उसकी नींव पर खड़ा होना चाहिये। यह तभी सम्भव है जब लोग सत्य के पुजारी बनें।

गांधीजी सत्य और ईश्वर को एक मानते हैं। इस एकरुपता की ओर संकेत करते हुये उन्होंने कहा कि इस जगत में जहाँ ईश्वर कहिए या सत्य कहिए, इसके सिवाय दूसरा कुछ भी निश्चित नहीं है। यहां निश्चितता का सवाल करना ही गलत मालूम पड़ता है। यह सम्पूर्ण वस्तु व्यापार जो अपने आस-पास दिखायी देता है और हो रहा है, अनिश्चितता है, क्षणिक है, इसमें परम तत्व निश्चित रूप से अन्तर्निहित है। जिस वास्तविकता को गांधीजी ने जाना और अनुभव किया, वह सत्य है। जब कभी कोई सत्य शब्द बोला जाता है, जब कभी कोई सत्य कार्य किया जाता है और जब कभी किसी सत्य भावना का अनुभव किया जाता है तब हम ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव करते हैं। ईश्वर का अस्तित्व है क्योंकि सत्य का अस्तित्व है। इस प्रकार गांधीजी के लिये सत्य और ईश्वर एक ही हैं।

गांधीजी सत्य के साक्षात्कार को ही मोक्ष मानते थे। यही बात बाईबिल में कही गयी है—*"तुम सत्य को जान लो और सत्य तुम्हें मुक्ति प्रदान करेगा।"* उनका कहना था— अच्छे लक्ष्य की प्राप्ति के लिये यदि मृत्यु तक का सामना करना पड़े तब भी पीछे नहीं हटना चाहिये। सत्य के मार्ग पर चलने के लिये मृत्यु तक का सामना करने को तैयार रहना चाहिये। गांधीजी ने सत्य को कसौटी पर परखा और कहा कि जो अहिंसा और

Scanned by CamScanner

सत्य की कसौटी पर खरा उतरे वही धर्म है। शैतान कोई व्यक्ति नहीं है बल्कि एक सिद्धान्त है—सत्य के निषेध का सिद्धान्त जबकि ईश्वरत्व सत्य का सिद्धान्त है। सत्य के दर्शन के बिना अहिंसा के दर्शन नहीं हो सकते। गांधीजी ने कहा कि, *"अपना सम्पूर्ण ज्ञान और पाण्डित्य तराजू के एक पलड़े पर और सत्य और पवित्रता को दूसरे पलड़े पर रखकर देखो, सत्य और पवित्रता वाला पलड़ा पहले पलड़े से कहीं भारी पड़ेगा।"*

जगत

गांधीजी के अनुसार, जगत ईश्वर की अभिव्यक्ति है, सर्वव्यापी सत् का ही एक व्यक्त रूप है। जगत के दो अर्थ निकलते हैं—एक तात्विक और दूसरा व्यावहारिक। तात्विक दृष्टि से यह वास्तविक भी है तथा सीमित भी। यह वास्तविक है क्योंकि यह ईश्वरीय अभिव्यक्ति है। यह सीमित है क्योंकि यह सृष्टि है, ईश्वर नहीं। गांधीजी विभिन्न विज्ञानों की खोजों का अध्ययन करते हैं तथा उस आधार पर निष्कर्ष पर आते हैं कि विश्व के हर भाग में उसकी गति एवं विकास का संचालन कुछ नियमों के आधार पर होता है। इनकी गति एवं विकासक्रम में ऐसी व्यवस्था एवं नियमनिष्ठता है कि उनके पीछे कुछ स्पष्ट नियमों का हाथ मानना ही पड़ता है। ऐसा विश्व के हर तत्व—सूर्य, चन्द्रमा आदि सभी के लिये सत्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन नियमों के बिना गति रुक जायेगी। गांधीजी इन अटूट नियमों में, इन प्राकृतिक नियमों में एक ऐसे संकल्प तथा ऐसी शक्ति का रूप देखते हैं जो विश्व में व्यवस्था तथा संगठन बनाये रखने के लिये संकल्पित है तथा विश्व को नष्ट होने से बचाये हुये है। गांधीजी के अनुसार, यह शक्ति ईश्वरीय शक्ति है और प्रकृति को संचालित करने वाले प्राकृतिक नियम भी उसी ईश्वरीय शक्ति के कार्य करने के ढंग हैं। इस प्रकार ईश्वरीय संकेत से संचालित जगत अवास्तविक तो हो ही नहीं सकता। गांधीजी के अनुसार जगत को वास्तविक मानने में व्यवहारिकता भी है। यदि जगत को हम वास्तविक मानते हैं तो यह भी मानना पड़ता है कि इसी जगत में हमें जीना है, कार्य करना है। तब न तो जगत के किसी तल को अवास्तविक कहने की आवश्यकता रह जाती है और न जीने के संकल्प के शिथिल होने की आवश्यकता रह जाती है। वास्तविक होते हुये भी यह जगत सीमित है। यह सीमित है क्योंकि यह असीम नहीं हो सकता। यह असीम इस कारण नहीं हो सकता क्योंकि दो असीम तो हो ही नहीं सकते। ईश्वर असीम है, उसकी सृष्टि असीम ही हो सकती है। सृष्टि की सीमितता का निर्देश एक अन्य ढंग से भी किया जा सकता है। जगत में अव्यवस्था तथा विनाश के अंश भी दिखायी देते हैं। गांधीजी को यह अवगत है कि जगत में यदा कदा ऐसी प्रवृत्तियाँ प्रकट हो जाती हैं जो इसके विकासक्रम तथा इसकी व्यवस्था के प्रतिकूल है। उनका कहना है कि तथ्यों से जगत की अवास्तविकता सिद्ध नहीं होती बल्कि उसकी सीमितता स्पष्ट होती है।

मानव

गांधीजी का कहना है कि मनुष्य एक जटिल प्राणी है। शरीरी मनुष्य, मनुष्य का बाह्यपक्ष है, जो दिखाई देता है। यह उसका स्वाभाविक एवं प्राकृतिक पक्ष है क्योंकि इस पक्ष में वह प्रकृति के अन्य जीवों के समान ही है। मनुष्य का शरीर भी अन्य जीवों के शरीर के समान विकसित होता है तथा नष्ट भी होता है। यह मनुष्य का भौतिक पक्ष है किन्तु मनुष्य अपने भौतिक पक्ष तक सीमित नहीं है उसमें ऐसी विशेषताएँ हैं जो उसके भौतिक स्वरूप से सर्वथा भिन्न हैं। उदाहरणतः उसमें मानवीय चेतना है, विवेकशक्ति है, अन्तरात्मा है, संकल्पशक्ति है, भावनायें हैं, आकांक्षायें हैं तथा इसी प्रकार की अन्य विशेषतायें हैं जिन्हें भौतिक नहीं कहा जा सकता। उसमें सौन्दर्यबोध है, भावनात्मक अनुभूतियाँ हैं, शुभ-अशुभ की पहचान है। गांधीजी का कहना है कि मानव की इन विशेषताओं को मानव के भौतिक पक्ष से सर्वथा भिन्न मानना ही पड़ता है। उनके अनुसार, ये सभी विशेषतायें मानव के मूल स्वरूप, उसकी मूल वास्तविकता की अभिव्यक्ति है, गांधीजी के अनुसार वह मूलस्वरूप मानव का आध्यात्मिक पक्ष है, मानव आत्म है।

वस्तुतः गांधीजी की मानव अवधारणा उनकी तात्विक मान्यताओं पर आधारित है। तत्वमीमांसीय दृष्टि से तो गांधी एकवादी हैं ही, अतः वे यह भी मानते हैं कि जिन वास्तविकताओं की हमें अनुभूति होती है—जैसे जगत या मानव—वे भी किसी-न-किसी रूप में ईश्वरीय ही हैं। मानव भी ईश्वर की ही अभिव्यक्ति हैं।

Scanned by CamScanner

अतः मानव के सभी पक्ष—शारीरिक, भौतिक, आध्यात्मिक—ईश्वरीय अभिव्यक्ति है। किन्तु, गांधीजी कहते हैं कि मानव का मूलस्वरूप वही हो सकता है जो ईश्वरतत्व के अधिक निकट हो तथा जिसके कारण अन्य पक्षों में ईश्वरतत्व का अंश आ जाता है। इस दृष्टि से 'आत्म ही मानव का मूल पक्ष है, क्योंकि उसके भौतिक पक्ष के ईश्वरीय लक्षण भी तभी स्पष्ट होते हैं जब वे आत्मा के द्वारा संचालित होते हैं। इसी दृष्टि से आत्म को, मानव के आध्यात्मिक पक्ष को उसके भौतिक पक्ष से श्रेष्ठतर माना गया है तथा उनका मूलरूप माना गया है।

मानव के भौतिक पक्ष का अपना महत्त्व अवश्य है, किन्तु मानव की विशिष्टता, उसका मूलस्वरूप उसकी आध्यात्मिकता ही है, उसका आत्मरूप ही है।

इस प्रकार गांधीजी की मूल मान्यता है कि हर मनुष्य में ईश्वरतत्व का अंश विद्यमान है। यह अंश अपने को अनेकों प्रकार से व्यक्त करता है। विवेकशक्ति, अन्तरात्मा की आवाज, इच्छा स्वातंत्र्य—ये सब इसी के रूप हैं। गांधीजी का विश्वास है कि यदि इस ईश्वरीय अंश का सदुपयोग उचित ढंग से होता रहे तो मनुष्य धरती पर स्वर्ग उतार सकता है।

अहिंसा

गांधीजी का कहना है कि अहिंसा सब धर्मों का मूल है। वे अहिंसा के सच्चे पुजारी थे। अहिंसा के द्वारा ही वे ईश्वर को प्राप्त करना चाहते थे—*"मैं भगवान को आमने-सामने देखना चाहता हूँ। मैं मानता हूँ कि ईश्वर सत्य ही है। मेरे लिये ईश्वर को प्राप्त करने का एकमात्र साधन अहिंसा अर्थात् प्रेम है।"* गांधीजी अहिंसा के बल पर ही मरकर भी अमरता को प्राप्त हो गये। गांधीजी ने कहा कि सत्य को अहिंसा के माध्यम से ही जाना जा सकता है। हिंसा तो क्रोध, घृणा और भय की भावना पैदा करती है, इसलिये यह सत्य को समझने में बाधक है। यद्यपि गांधीजी के लिये सत्य और अहिंसा एक सिक्के के दो पक्ष हैं, उन्हें एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता, फिर भी अहिंसा साधन और सत्य साध्य है।

गांधीजी की मूल धारणा है कि अहिंसा मानव जाति के पास उपलब्ध महानतम् शक्ति है। वे अहिंसा को विश्व के विनाशकारी, शस्त्रों के सम्पूर्ण योग की तुलना से भी अधिक शक्तिशाली और प्रभावशाली मानते थे। उनके अनुसार अहिंसा एक जीवन्त शक्ति है तथा पूरा संसार इस शक्ति द्वारा नियंत्रित एवं संचालित है। उनकी धारणा है कि—

(1) अहिंसा मानवीय जीवन की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। अज्ञान, असत्य, क्रोध आदि के वशीभूत होकर व्यक्ति हिंसक, आचरण अपना सकता है लेकिन यह नितान्त अस्थायी स्थिति है। विवेक और चेतना के जाग्रत होने पर वह अहिंसा को अपना लेगा।

(2) अहिंसा, हिंसा की तुलना में अधिक प्रभावकारी है, हिंसा में कोई समस्या हल नहीं होती, वह तो केवल प्रति हिंसा को जन्म देती है, लेकिन अहिंसा स्थायी विजय दिलाने में समर्थ है।

(3) अहिंसा की सफलता सुनिश्चित है। अहिंसा ऐसा अस्त्र है जिसे कोई भी भौतिक बल पर झुका नहीं सकता। अहिंसा की शक्ति को सीमा से नहीं बांधा जा सकता।

गांधीजी ने अहिंसा का अर्थ बहुत व्यापक माना है—मनसा, वाचा, कर्मणा—तीनों प्रकार से अहिंसा का पालन करना चाहिये। हिंसा में सभी अमानुषिक वृत्तियों—इन्द्रियलिप्सा, संकुचित स्वार्थपरता, अहंभाव, अविवेकपूर्ण भोगवृत्ति, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष आदि का समावेश है। हिंसा पर विजय अहिंसा से ही हो सकती है। उन्होंने कहा कि पूर्ण अहिंसा सभी प्राणियों के प्रति दुर्भावना के अभाव का नाम है।....इस प्रकार अहिंसा अपने क्रियात्मक रूप में सभी जीवनधारियों के प्रति सद्भावना का नाम है। यह तो विशुद्ध प्रेम है।

अहिंसा का अर्थ गांधीजी के शब्दकोष में कायरता नहीं थी। कायरता की अपेक्षा वे हिंसा को अधिक श्रेयस्कर मानते थे। उनका कहना था कि अहिंसा किसी भी रूप में या किसी भी परिस्थिति में बुराई या अत्याचार को सहन करने या उसके समक्ष समर्पण करना नहीं है वरन् उसके द्वारा तो बुराई का आध्यात्मिक बल के आधार पर प्रतिरोध करना है। उनका कहना था कि कायरता और अहिंसा, पानी और आग की तरह एक साथ नहीं रह सकते। गांधीजी की अहिंसा की अग्रलिखित विशेषतायें हैं—

Scanned by CamScanner

(1) अहिंसा प्रेम और श्रद्धा पर आधारित है।
(2) अहिंसा परम श्रेष्ठ मानव धर्म है।
(3) अहिंसा में कठोर नैतिक अनुशासन द्वारा आत्मशोधन की विविक्षा है।
(4) अहिंसा से निर्लिप्तता और त्यागवृत्ति आती है।
(5) अहिंसा एक आध्यात्मिक अस्त्र है, जिससे आत्मा क्रियाशील होती है।
(6) अहिंसा व्यक्ति को स्वाभिमान, आत्म सम्मान और आत्म रक्षण की प्रेरणा प्रदान करती है।
(7) अहिंसा केवल व्यक्ति का सद्गुण ही नहीं वरन् सामाजिक जीवन और राजनीतिक व्यवस्था का भी विश्वसनीय आधार है।
(8) अहिंसा में सत्य और अभय समाहित है।

अहिंसा की प्राप्ति के लिये गांधीजी ने जिन उपायों का आश्रय लिया, वे निम्नलिखित हैं—

(1) ब्रह्मचर्य—ब्रह्मचर्य की परिभाषा करते हुये गांधीजी ने कहा, "ब्रह्मचर्य केवल यांत्रिक संयम नहीं है। सभी इन्द्रियों पर पूर्ण संयम तथा मन, वचन और कर्म में वासना से मुक्ति ही ब्रह्मचर्य है। इस प्रकार आत्मानुभूति अथवा ब्रह्म की प्राप्ति के लिये यह राजमार्ग है।" पुनः इसकी परिभाषा करते हुये वे कहते हैं—*"ब्रह्मचर्य केवल यांत्रिक संयम नहीं है। सभी इन्द्रियों पर पूर्ण संयम ही ब्रह्मचर्य है। इससे सभी वासनाओं से पूर्ण मुक्ति होती है और मन, वचन तथा कर्म के पाप से भी।"*

(2) अपरिग्रह अथवा असंग्रह—गांधीजी का अपरिग्रह अथवा असंग्रह केवल सम्पत्ति के असंग्रह से ही सम्बन्धित नहीं है। प्रत्युत गीता में जो निष्काम कर्म का उपदेश है, जो निःसंगत्व का संदेश है—मन, वचन और कर्म में वह अपरिग्रह का मूल आधार है।

(3) भक्ति, प्रार्थना एवं उपासना—गांधीजी की मान्यता थी कि ईश्वर तथा सत्य की प्राप्ति अथवा अहिंसा, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह के कठिन मार्ग का अनुगमन केवल बौद्धिक ज्ञान से नहीं हो सकता। बिना भक्ति के, बिना प्रार्थना और उपासना के न तो सत्य की प्राप्ति हो सकती है और न ही जीवन के मर्म को समझा जा सकता है।

(4) मौन—मौन का अर्थ केवल न बोलने से नहीं है अपितु मन के संयम से है। गांधीजी ने अपनी आत्म कथा में लिखा है—*"अनुभव ने मुझे यह भी सिखाया है कि सत्य के पुजारी के लिये मौन का सेवन उचित है। जाने अनजाने भी मनुष्य अक्सर अतिशयोक्ति करता है अथवा जो कहने योग्य है उसे छिपाता है या भिन्न रूप में कहता है। ऐसे संकटों से बचने के लिये अल्पभाषी होना आवश्यक है।"*

(5) प्रायश्चित—अपनी त्रुटियों और भूलों को स्वीकार करना तथा आत्मशुद्धि के लिये किसी व्रत का अनुष्ठान करना ही प्रायश्चित है। गांधीजी के जीवन में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब उन्होंने अपनी त्रुटि को स्वीकार किया और प्रायश्चित के रूप में उपवास का सहारा लिया।

(6) श्रम—गांधीजी ने श्रम की प्रतिष्ठा पर बल दिया। उन्होंने कहा कि सादा, मेहनत-मशक्कत का, किसान का जीवन ही सच्चा जीवन है। उन्होंने दिनचर्या में शारीरिक श्रम पर विशेष ध्यान दिया, श्रम को उन्होंने धन से श्रेष्ठ माना। उनका कहना था कि प्रत्येक मनुष्य को अपने पसीने की कमाई खानी चाहिए।

सत्याग्रह

सत्याग्रह का शाब्दिक अनुवाद है—सत्य का आग्रह, सत्य की शक्ति। इसको गांधीजी ने कभी-कभी आत्मशक्ति तथा प्रेम शक्ति भी कहा है। अपने जीवन भर गांधीजी अहिंसा पालन के ढंग पर नये-नये प्रयोग करते रहे, जिसके फलस्वरूप उनके विचारों में, 'सत्याग्रह' का एक स्पष्ट ढंग विकसित हो गया। उनके जीवन दर्शन में इसका बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। गांधीजी ने कहा कि सत्याग्रह निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं है। सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध में उतना ही अन्तर है जितना उत्तर एवं दक्षिण ध्रुव में है। निष्क्रिय प्रतिरोध की कल्पना तो एक निर्बल के अस्त्र के रूप में की गयी है और उसमें अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिये शरीर बल या हिंसा का

Scanned by CamScanner

उपयोग वर्जित नहीं है जबकि सत्याग्रह की कल्पना परमशूर के अस्त्र के रूप में की गयी है और इसमें किसी भी प्रकार या रूप में हिंसा के प्रयोग के लिये स्थान नहीं है। गांधीजी ने कहा कि सत्याग्रह का अर्थ है सत्य के प्रति पूर्ण निष्ठा, सत्य का दामन हर स्थिति में पकड़े रहना। सत्याग्रह एक प्रकार से धार्मिक आचरण है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि ईश्वर एक है तथा वही हर मनुष्य, हर जीव, हर सत्ता में है। हम जिसका विरोध करते हैं उसमें भी उसी ईश्वर का वास है जो हम में है। इसी कारण सत्याग्रह सर्वव्यापी प्रेम का दूसरा नाम है। यदि यह प्रेम न हो तो सत्याग्रह का कोई अर्थ नहीं रह जाता।

गांधीजी ने सत्याग्रह को इतना महत्त्व दिया कि उन्होंने 'दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास' पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। एक ओर सत्याग्रह का अर्थ सत्य के लिये आग्रह करना है और दूसरी ओर व्यावहारिक दृष्टि में यह अन्याय और असत्य के प्रति निरन्तर संघर्ष करने की शैली है। इस संघर्ष में क्रोध और द्वेष से मुक्त होकर लड़ाई लड़नी पड़ती है और शत्रु को भी प्रेम से जीतने का प्रयास इसमें समाहित है। इसमें हिंसा का कोई स्थान नहीं है। यदि गांधीजी का जीवन सत्य के प्रयोग की कथा है तो सत्याग्रह सत्य के प्रयोग के लिये किये गये संघर्षों की कथा है। गांधीजी ने सत्याग्रह के अर्थ को स्पष्ट करते हुये कहा, *"अन्याय का सर्वथा विरोध करते हुये भी अन्यायी के प्रति बैरभाव न रखना सत्याग्रह का मूल लक्षण है। जगत में निर्बल मनुष्य बैर रखते हैं, सबल मनुष्य अपने बैर भाव का त्याग कर सकते हैं। सबल का अर्थ शरीर, बल रखने वाले मनुष्य नहीं, सबल पुरुष और सबल स्त्री वही है जिन्हें मरना आता है। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें सत्य का पालन करते हुये निर्भयतापूर्वक मृत्यु का वरण करना चाहिये और मरते-मरते भी, जिसके विरुद्ध हम सत्याग्रह कर रहे हैं, उसके प्रति बैरभाव अथवा क्रोध नहीं करना चाहिये।"* गांधीजी के सत्याग्रह की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

(1) सत्याग्रह आत्मशक्ति या आध्यात्मिक शक्ति है। इसकी पहली शर्त है ईश्वर में विश्वास। अविश्वासी कभी सत्याग्रही नहीं हो सकता।

(2) सत्याग्रह में मनसा, वाचा, कर्मणा किसी प्रकार की भी हिंसा को कोई स्थान नहीं है। अनुचित कार्य का ही प्रतिरोध होगा। अनुचित कार्य करने वाले को कोई चोट नहीं पहुँचायी जायेगी।

(3) सत्याग्रह यह मानकर किया जाता है कि मारने वाले में कष्ट सहने की इच्छा और क्षमता है।

(4) सत्याग्रह अनुचित उद्देश्य के लिये नहीं होता। जिनका उद्देश्य उचित हो उनको दृढ़तापूर्वक अन्त तक लड़ना और कष्ट सहन करना होगा।

(5) सत्याग्रह की पूर्व शर्त है—सहिष्णुता, निर्भीकता, स्वतंत्रता और प्रेम।

(6) सत्याग्रह के लिये नम्रता अपेक्षित है। व्यवहार ही सिद्धान्त तथा औचित्य का सूचक होना चाहिये। इसी में सच्ची शक्ति निहित है।

(7) सत्याग्रह के लिये अनुशासन आवश्यक है। सत्याग्रह करते समय व्यक्ति को शान्त रहना होता है और उत्तेजना की तीव्र अग्नि में भी विक्षुब्ध तथा अविचलित बने रहना पड़ता है।

(8) सत्याग्रह व्यक्तिगत लाभ के लिये नहीं होना चाहिये बल्कि दूसरों के हित के लिये भी होना चाहिये। इसे बड़ी समझदारी से दीर्घकालिक अनुशासन के उपरान्त ही अमल में लाना चाहिये।

गांधीजी के अनुसार सत्याग्रह का यह शस्त्र विभिन्न परिस्थितियों में अलग-अलग रूप ग्रहण कर सकता है। सत्याग्रह के प्रमुख रूप निम्नलिखित हैं—

(1) असहयोग—गांधीजी का विचार था कि किसी भी शासन के द्वारा जनता के सहयोग से ही शोषण और अत्याचार किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में यदि जनता शासन के साथ सहयोग न करे तो शासन के द्वारा कार्य नहीं किया जा सकेगा अर्थात् शासन ठप्प हो जायेगा। असहयोग की जड़ें प्रेम में हैं। जो लोग सहमत न हों उन्हें भी धैर्य के साथ मत परिवर्तन करने के लिये प्रयत्न करना चाहिये। गांधीजी ने 1920-21 में ब्रिटिश शासन का विरोध करने के लिये इसी मार्ग को अपनाया था।

(2) सविनय अवज्ञा—सविनय अवज्ञा असहयोग से भिन्न है। इसका अर्थ है अहिंसक और विनयपूर्ण तरीके से कानून की अवज्ञा करना। गांधीजी ने 1931 में नमक आन्दोलन के रूप में इसी शस्त्र का प्रयोग किया था।

Scanned by CamScanner

(3) हिजरत का प्रवजन—हिजरत का प्रवजन का अर्थ है स्वैच्छिक निर्वासन। यह वैयक्तिक सत्याग्रह के रूप में भी हो सकता है और सामूहिक सत्याग्रह के रूप में भी हो सकता है। गांधीजी ने उन लोगों के लिये इसका अनुमोदन किया जो उत्पीड़ित हों, जिनका किसी विशिष्ट स्थान पर आत्म सम्मान सुरक्षित न हो और वे अपनी रक्षा के लिये हिंसक शक्ति न रखते हों। 1928 में गांधीजी ने बारदोली और 1930 में लिम्बडी, जूनागढ़ और विथालड़ के सत्याग्रहियों को हिजरत की सलाह दी थी।

(4) हड़ताल—सत्याग्रह का एक अन्य रूप हड़ताल है। गांधीजी के अनुसार हड़ताल आत्मशुद्धि के लिये किया जाने वाला एक स्वैच्छिक प्रयत्न है जिसका लक्ष्य स्वयं कष्ट सहन करते हुये विरोधी का हृदय परिवर्तन करना है। गांधीजी के अनुसार हड़ताल का कारण न्यायोचित होना चाहिये। इसमें हिंसा का सहारा नहीं लिया जाना चाहिये।

(5) अनशन—सत्याग्रह का सबसे प्रबल रूप अनशन है। गांधीजी बुरे या अहितकर विचार, क्रियाकलाप या भोजन से परहेज को अनशन करते थे। तप या आत्म शोधन, अनुचित कार्य के प्रायश्चित स्वरूप तथा किसी प्रकार के विकराल अन्याय के प्रतिरोध में अनशन किया जाता है। गांधीजी इसे अत्यधिक उग्र अस्त्र समझते थे और उनका मानना था कि इसे अपनाने में अत्यधिक सावधानी बरती जानी चाहिये। इस अस्त्र का प्रयोग हर किसी के द्वारा नहीं वरन् आध्यात्मिक बल से सम्पन्न व्यक्ति के द्वारा ही किया जाना चाहिए क्योंकि इसके सफल प्रयोग के लिये मानसिक शुद्धता, अनुशासन और नैतिक मूल्यों में आस्था की अत्यधिक आवश्यकता होती है।

साध्य और साधन

गांधीजी के अनुसार साध्य और साधन एक दूसरे से अनिवार्यतः सम्बन्धित हैं लेकिन साध्य और साधन में होने वाला सम्बन्ध उनकी दृष्टि में दूसरे विचारकों के विचारों से भिन्न था। उनका मत था कि मेरे लिये साधनों को जानना ही यथेष्ठ है। मेरे जीवन दर्शन में साधन और साध्य परिवर्त्य शब्द है। हमारा सदा साधनों पर नियन्त्रण रहता है, साध्यों या फलों पर नहीं। मैं समझता हूँ कि हमारे साधनों में जिस अनुपात में पवित्रता होगी साध्य की ओर हमारी प्रगति भी उसी अनुपात में होगी। साध्य और साधन के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुये गांधीजी कहते हैं कि 'साधन' की उपमा 'बीज' से कर सकते हैं और तब उस सन्दर्भ में साध्य को वृक्ष कह सकते हैं। जिस प्रकार का सम्बन्ध 'बीज' तथा 'वृक्ष' में है, वैसा ही सम्बन्ध 'साधन' तथा 'साध्य' में है।

गांधीजी साधन को बड़ा महत्त्व देते हैं। वे कहते हैं कि जीवन में, व्यवहार में वस्तुतः साधन ही महत्त्वपूर्ण है। ईश्वर ने यदि हमें कुछ नियंत्रण की शक्ति दी है तो वह मात्र साधन पर ही लग सकती है, साध्य पर नहीं। साध्य या लक्ष्य हमारे नियंत्रण से सर्वथा बाहर है, हम तो उसकी प्राप्ति के विभिन्न साधन अपना सकते हैं, उसका उपयोग कर सकते हैं तथा उन्हीं 'साधनों' के आधार पर ही यह तय होगा कि किस प्रकार के लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। गांधीजी द्वारा साधनों की पवित्रता पर जो बल दिया गया उसका आधार है भगवद्गीता का निष्काम कर्मयोग। उनका दृढ़ विश्वास था कि किसी हाथ में लिये हुये काम को पूरी एकाग्रता से तभी किया जा सकता है जब उसे निष्काम भाव से तथा बिना किसी प्रकार की भविश्य की चिन्ता से किया जाये।

मानवतावाद

गांधीजी यथार्थतः मानवतावादी थे। वे कहते थे, 'मानव सेवा ही ईश्वर की पुष्कल पूजा है। वे मानव को सर्वोपरि मानते थे। बहुसंख्यक जनता को वे दरिद्र नारायण की संज्ञा से अभिहित करते थे। अतः मानव विकास की बाधाओं को समूलतः नष्ट कर देना चाहते थे। यही कारण था कि वे विज्ञान का उपयोग भी मानवता के विकास के लिये करना चाहते थे। वे 'जियो और जीने दो' के समर्थक थे। गांधीजी के दर्शन का केन्द्र बिन्दु मानव है और केवल मानव के विकास को वे उसी रूप में लेकर चलना चाहते थे जैसे कि फ्रांसीसी मानववादियों की ओर से कोशिश की गयी थी। वे मानव समाज के संगठन के मुख्य आधार स्वार्थ और भय को नहीं मानते थे, वरन् वे त्याग और धर्म को उसका आधार मानते थे। उनका ईश्वर भाग्यवादियों का ईश्वर नहीं है। वे सत्य को ईश्वर मानते थे और सत्य की प्राप्ति का साधन अहिंसा एवं प्रेम ही हो सकता है।

Scanned by CamScanner

- उपर्युक्त गुणों पर आधारित सामाजिक व्यवस्था समाज से सभी तरह के शोषणों यथा आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और यहाँ तक कि धार्मिक शोषण को दूर करता है।
- सत्य, न्याय और अहिंसा के गुणों से रहित समाज/व्यक्ति, समाज के लोगों के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और यहाँ तक कि धार्मिक शोषण को दूर करता है।
- शोषण मानवीय गरिमा को प्रभावित करता है, इसलिए कुछ लोगों के हाथों में शक्ति, सामाजिक प्रतिष्ठा और सम्पत्तियों के केंद्रीकरण को हतोत्साहित करने के साथ ही इसका हल करना चाहिए।
- जाति व्यवस्था पर गांधीजी के विचार मौजूदा समाज के आचरण से भिन्न हैं। उनका तात्पर्य है कि श्रम का विभाजन और कार्यों की विशेषज्ञता, व्यक्तिगत प्रकृति (स्वभाव) के अनुकूल हो।
- वह सोचते हैं कि कोई भी जाति या वर्ग श्रेणीबद्ध रूप से व्यवस्थित नहीं होता है।
- शारीरिक बल नहीं, बल्कि नैतिकता पर आधारित प्रशासन से समाज व्यवस्थित रहता है तथा जीवन को सार्थकता की ओर ले जाता है। शारीरिक शक्ति और अहिंसा न केवल अलोकतांत्रिक हैं, बल्कि यह हर तरह से शोषण का कारण भी बनता है।
- कुटीर व ग्रामीण उद्योगों पर जोर देते हुए, विकेन्द्रीकृत कृषि एवं उद्योग पर आधारित आर्थिक और सामाजिक संरचना का निर्माण किया जाना चाहिए।
- विकेंद्रीकृत ग्राम और कुटीर उद्योग बड़े उद्योगपति के संचय पर रोक लगाते हैं और इस तरह वे नई उद्यमिता के साथ रोजगार प्रदान करने का नया रास्ता खोलते हैं।
- परिवार और पारिवारिक नैतिकता, आर्थिक और मूल्य पर आधारित विकास के आधार है। सभी को काम करना चाहिए और यहाँ तक कि एक बौद्धिक कर्मचारी को भी कुछ शारीरिक श्रम अवश्य करना चाहिए।
- पदार्थ और आध्यात्मिकता के बीच एक अंतरंग संबंध है। भौतिक प्रतिष्ठाएँ साधन मात्र हैं जो अपने आप में अंतिम ध्येय नहीं हैं।
- इन्द्रिय आनंद के लिये भौतिक साधनों की संचय प्रवृत्ति समाज के लिये हानिकारक है, क्योंकि यह लगातार इच्छा, लालच, जुनून, शक्ति प्रेम और तटस्थता को बढ़ावा देती है।
- कुछ परिभाषित सीमाओं के उपरान्त, इच्छा और भूख व्यक्ति को दासता की ओर ले जाती हैं, इसलिए सभी भौतिक स्थितियों/उपकरणों को दृढ़ता से नियंत्रित करना चाहिए।
- शिक्षा को, उपरोक्त सभी मुद्दों पर, विशेष रूप से जीवन की भौतिक अवधारणा को संबोधित करना चाहिये, और यह भी संबोधित करना चाहिये कि एक प्रसन्न और शांतिपूर्ण समुदायिक जीवन के लिए क्या करना चाहिए।
- गांधीजी सहकारी सेवा के आधार पर एक जातिहीन और वर्गहीन समाज पर ध्यान केंद्रित करते हैं। किसी भी प्रकार का शारीरिक श्रम, न कम महत्व का है, न अपमानजनक है। सभी प्रकार के कार्य सम्मानजनक हैं, और पवित्र हैं।
- प्रत्येक सचेत और ईमानदार कर्मचारी, न केवल अपनी मजदूरी के योग्य है, बल्कि सम्मान के योग्य भी है।
- मूल्य, धन या पेशे के आधार पर कोई पदानुक्रम वर्ग या जाति नहीं है। प्राकृतिक और अर्जित क्षमताओं के आधार पर आपसी सहयोग और श्रम का विभाजन होना चाहिए।
- न्याय आधारित साधन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना महत्वपूर्ण है लक्ष्य की प्राप्ति, लेकिन राजनीति और अन्य क्षेत्रों में, लक्ष्य प्राप्त करने की प्रक्रिया कई गुना ज्यादा महत्वपूर्ण है।

Scanned by CamScanner

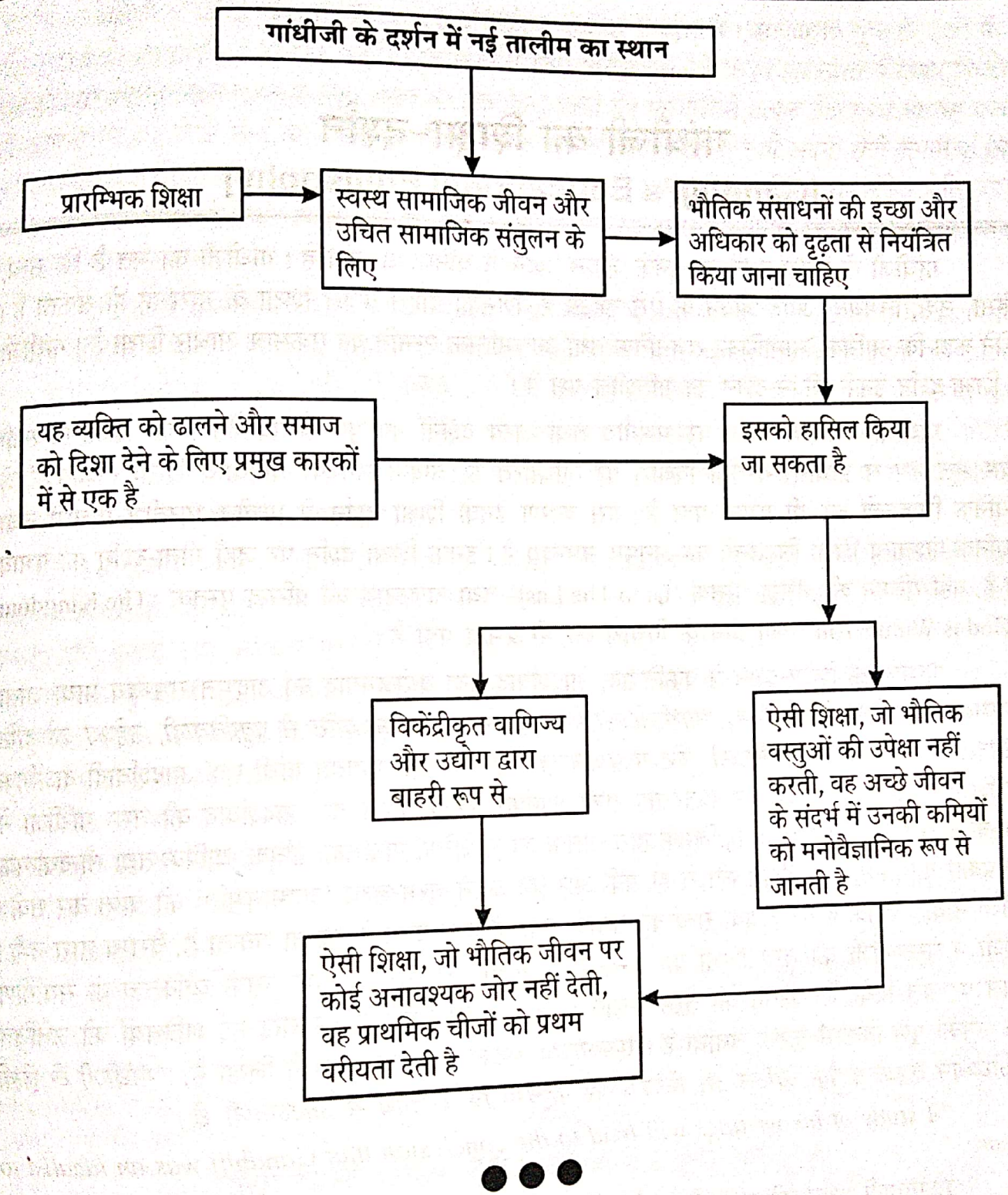

Scanned by CamScanner